दिल्ली अधीनस्थ सेवा चयन बोर्ड
DSSSB TGT & PGT
ROJGAR WITH ANKIT
Part-B
SCHOLAR BATCH
संस्कृत
प्रतिमानाटकम् (तृतीय अंक)
LIVE
13-08-2024 05:00 PM

प्रतिमानाटकम् (तृतीय अंक)

हितोपदेशः

भाषानुवादसमलंकृतः

प्रस्ताविका

सिद्धिः साध्ये सतामस्तु प्रसादात्तस्य धूर्जटेः ।
जाह्नवीफेनलेखेव यन्मूर्ध्नि शशिनः कला ॥ १॥

जिन्होंके ललाटपर चन्द्रमाकी कला गंगाजी के फेनकी रेखाके समान शोभाय- मान है उन चन्द्रशेखर महादेवजीकी कृपासे साधुजनोंका मनोरथ सिद्ध होय ॥ १ ॥

श्रुतो हितोपदेशोऽयं पाटवं संस्कृतोक्तिषु ।
वाचां सर्वत्र वैचित्र्यं नीतिविद्यां ददाति च ॥ २ ॥

यह हितोपदेश नामक ग्रंथ सुना हुआ (सुननेसे) संस्कृतके बोलने-चालनेमें चतुरताको, सब विषयोंमें वाक्योंकी विचित्रताको और नीतिविद्याको देता है ॥ २ ॥

अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तयेत् ।

गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत् ॥ ३ ॥

बुद्धिमान् मनुष्य अपनेको कभी बूढ़ा न होऊँगा और कभी न मरूँगा ऐसा जानकर विद्या और धनसंचय का विचार करे, मृत्युने चोटीको आ पकड़ा है ऐसा सोच कर धर्म करे ॥ ३ ॥

सर्वद्रव्येषु विद्यैव द्रव्यमाहुरनुत्तमम् ।

अहार्यत्वादनर्घत्वादक्षयत्वाच्च सर्वदा ॥ ४ ॥.

पण्डित लोग सब कालमें (कभी) चौरादिकोंसे नहीं चुराये जानेसे, अनमोल होनेसे और कभी क्षय न होनेसे, सब पदार्थोंमेंसे उत्तम पदार्थ विद्याकोही कहते हैं ॥ ४ ॥

संयोजयति विद्यैव नीचगापि नरं सरित् ।
समुद्रमिव दुर्धर्षं नृपं भाग्यमतः परम् ॥ ५ ॥

जैसे नीच अर्थात् तुच्छ तृणादिसे मिलनेवाली नदी उस तृणादिकको अथाह समुद्रसे जा मिलाती है, उसी प्रकार विद्याभी नीच पुरुषको प्राप्त (वश) होकर राजासे जा मिलाती है, फिर सौभाग्य का उदय कराती है ॥ ५ ॥

विद्या ददाति विनयं विनयाद्याति पात्रताम् ।

पात्रत्वाद्धनमाप्नोति धनाद्धर्म ततः सुखम् ॥ ६ ॥

विद्या मनुष्यको नम्रता देती है और नम्रतासे योग्यता, योग्यतासे धन,

'धनसे धर्म, फिर धर्मसे सुख पाता है ॥ ६ ॥

विद्या शस्त्रस्य शास्त्रस्य द्वे विद्ये प्रतिपत्तये ।

आद्या हास्याय वृद्धत्वे द्वितीयाद्रियते सदा ॥ ७ ॥

शस्त्रविद्या और शास्त्रविद्या ये दोनों आदर करानेवाली हैं परंतु पहली अर्थात् शस्त्रविद्या बुढ़ापेमें "पुरुषार्थ न होनेसे" हँसी कराती है और दूसरी अर्थात् शास्त्रविद्या सदैव आदर कराती है ॥ ७ ॥

यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो नान्यथा भवेत् ।

कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते ॥ ८ ॥

जैसे मृत्तिकाके कोरे बर्तनमें जिस वस्तुका संस्कार पहले होजाता है और पीछे वह उसमेंसे नहीं जाता है; उसी प्रकार में इस हितोपदेश ग्रन्थमें कथाके बहानेसे बालकों के लिये नीति कहता हूँ ॥ ८ ॥

मित्रलाभः सुहृद्भेदो विग्रहः संधिरेव च ।
पञ्चतन्त्रात्तथाऽन्यस्माद्ग्रन्थादाकृष्य लिख्यते ॥ ९ ॥

पंचतन्त्र तथा अन्य अन्य नीतिशास्त्रके ग्रन्थोंसे आशय लेकर, १ मित्रलाभ, २ सुहृद्भेद, ३ विग्रह और ४ सन्धि, ये चार भाग बनाये जाते हैं ॥ ९ ॥

अस्ति भागीरथीतीरे पाटलिपुत्रनामधेयं नगरम् । तत्र सर्व-

अनधीत पुत्रोंके लिये राजाकी चिंता ३

खामिगुणोपेतः सुदर्शनो नाम नरपतिरासीत्। स भूपतिरेकदा केनापि पठ्यमानं श्लोकद्वयं शुश्राव -

गंगाजीके किनारेपर पटना नामका एक नगर है, वहाँ राजाके संपूर्ण गुणोंसे शोभायमान, सुदर्शन नामका एक राजा रहता था. एक समय उस राजाने किसीको पढ़ते हुए, ये दो श्लोक सुने-

"अनेकसंशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम् ।
सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः ॥ १० ॥

"अनेक सन्देहोंको दूर करनेवाला और छिपे हुए अर्थको दिखाने वाला शास्त्र, सबका नेत्र है, ज्ञानरूपी जिसके पास वह शास्त्र नेत्र नहीं है वह अन्धा है ॥१०॥

यौवनं धनसंपत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता ।

एकैकमप्यनर्थाय, किमु यत्र चतुष्टयम् ?" ॥ ११ ॥

यौवन, धन, प्रभुता और अविचारता, इनमेंसे एक एक भी हो तो अनर्थके करने वाली है और जिसमें ये चारों होय वहांका क्या ठीक है ?" ॥११॥

इत्याकर्थ्यात्मनः पुत्राणामनधिगतशास्त्राणां नित्यमुन्मार्ग-
गामिनां शास्त्राननुष्ठानेनोद्विग्नमनाः स राजा चिन्तयामास -

इन दोनो श्लोकों को सुनकर, वह राजा, शास्त्रको न पढ़नेवाले, तथा प्रतिदिन कुमार्गमें चलने वाले, अपने लड़कोंके, शास्त्र न पढनेसे मन व्याकुल होकर सोचने लगा-

'कोऽर्थः पुत्रेण जातेन यो न विद्वान्न धार्मिकः ।
काणेन चक्षुषा किं वा, चक्षुःपीडेव केवलम् ॥ १२ ॥

जो न पण्डित है और न धर्मशील है, ऐसा पुत्र उत्पन्न हुआ किस कामका ? जैसे काणी आंखसे क्या सरता है? केवल आँखकोही पीदा है ॥ १२ ॥

अजात-मृत-मूर्खाणां वरमाद्यौ न चान्तिमः ।
सकृदुःखकरावाद्यावन्तिमस्तु पदे पदे ॥ १३ ॥

उत्पन्न नहिं हुआ, तथा होकर मर गया और मूर्ख, इन तीनोंमेंसे पहले दो अच्छे हैं और अन्तिम (मूर्ख) अच्छा नहीं, क्योंकि पहले दोनों एकही

वार दुःखके करने वाले हैं. अंतिम क्षण-क्षणमें (इमेशा) दुःख देता है ॥ १३ ॥

किंच, -

वरं गर्भस्त्रावो वरमपि च नैवाभिगमनं
वरं जातः प्रेतो वरमपि च कन्यैव जनिता ।
वरं वंध्या भार्या वरमपि च गर्भेषु वसति-
र्न चाऽविद्वान् रूपद्रविणगुणयुक्तोऽपि तनयः ॥ १४ ॥

और गर्भका गिर पड़ना, स्त्रीका संसर्ग न करना, उत्पन्न होकर मर जाना, कन्याका होना, स्त्रीका बाँझ रहना, अथवा उसके गर्भमेंही रहना अच्छा है, परन्तु सुन्दरता तथा सुवर्णके आभूषणोंसे युक्त भी मूर्ख पुत्र होना अच्छा नहीं ॥ १४ ॥

किंच, -

स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम् ।
परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते १ ॥ १५ ॥

और जिस पुत्रके उत्पन्न होनेसे वंशकी बड़ाई हो, वह जानों उत्पन्न हुआ, नहीं तो इस असार संसारमें मरकर कौन मनुष्य उत्पन्न नहीं होता है? अर्थात् बहुत-से होते हैं और बहुत-से मरते हैं ॥ १५ ॥

गुणिगणगणनारम्भे न पतति कठिनी सुसंभ्रमाद्यस्य ।
तेनाम्बा यदि सुतिनी वद वन्ध्या कीदृशी नाम ॥ १६ ॥

गुणियोंकी गिनतीके आरंभमें जिसका नाम गौरवपूर्वक खडियासे नहीं लिखा जाय, ऐसे पुत्रसे जो माता पुत्रवती कहलावे तो कहो बाँझ कैसी होती है ? अर्थात् जिसका पुत्र निर्गुणी है वही सचमुच बाँझ है ॥ १६ ॥

अपि च, -

दाने तपसि शौर्ये च यस्य न प्रथितं मनः ।
विद्यायामर्थला मे च मातुरुच्चार एव सः ॥ १७ ॥

और भी कहा है कि- दानमें, तपमें, शूरतामें, विद्या के पढ़ने में और धनके लाभमें जिसका मन नहीं लगा वह पुत्र अपनी माताके मलमूत्रके समान वृथा है ॥ १७ ॥

गुणवान् और मूर्ख पुत्रकी समीक्षा

अपरं च, -

वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खशतान्यपि ।
एक श्चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणा अपि ॥ १८ ॥

और दूसरे-गुणी एकही पुत्र अच्छा परंतु मूर्ख सौ अच्छे नहीं, क्योंकि अकेला चन्द्रमा अंधेरे को दूर कर देता है किंतु अनेक तारों के समूह भी नहीं कर सकते हैं ॥ १८ ॥

पुण्यतीर्थे कृतं येन तपः क्वाप्यतिदुष्करम् ।

तस्य पुत्रो भवेद्वश्यः समृद्धो धार्मिकः सुधीः ॥ १९ ॥

जिस मनुष्यने किसी पुण्य तीर्थमें अतिकठिन तप किया है, उसीका पुत्र आज्ञाकारी, धनवान्, धर्मशील और पंडित होता है ॥ १९ ॥

अर्थागमो नित्यमरोगिता च

प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च ।

वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी च विद्या

षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन् ! ॥ २० ॥

हे राजा ! नित्य धनका लाभ, आरोग्य, प्रियतमा और मधुरभाषिणी स्त्री, आज्ञाकारी पुत्र और धनका लाभ कराने वाली विद्या, ये संसारमें छः सुख हैं ॥

को धन्यो बहुभिः पुत्रः कुशूलापूरणाढकैः ?।
वरमेकः कुलालम्बी यत्र विश्रूयते पिता ॥ २१ ॥

कुशूल नाम पात्रोंसे भरेजाने वाले, अनाज रखनेके आढक नाम पात्रोंके समान अर्थात् बहुत भोजन करने वाले पुत्रोंसे कौन बढ़ाई पाता है ? परंतु जिसके उत्पन्न होनेसे पिता संसारमें विख्यात हो ऐसा कुलदीपक एकही पुत्र अच्छा है ॥ २१ ॥

ऋणकर्ता पिता शत्रुर्माता च व्यभिचारिणी ।

भार्या रूपवती शत्रुः पुत्रः शत्रुरपण्डितः ॥ २२ ॥

ऋणकर्ता पिता, व्यभिचारी याने बदचलन माता, अत्यंत सुन्दर स्त्री और मूर्ख पुत्र ये चारों शत्रु के समान हैं ॥ २२ ॥

अनभ्यासे विषं विद्या अजीर्णे भोजनं विषम् ।
विषं सभा दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ २३ ॥

अभ्यास न करने से विद्या, अजीर्ण होने पर भोजन, दरिद्रीको सभा और बूढेको तरुण स्त्री, विषके समान है ॥ २३ ॥

यस्य कस्य प्रसूतोऽपि गुणवान् पूज्यते नरः ।
धनुर्वंशविशुद्धोऽपि निर्गुणः किं करिष्यति ? ॥ २४ ॥

किसी से भी उत्पन्न हुआ हो, किन्तु गुणवान् होनेसे प्रतिष्ठा पाता है; जैसे अच्छे बांसका बना हुआभी धनुष्य गुण अर्थात् डोरीके विना क्या कर सकता है ? ॥ २४ ॥

तत्कथमिदानीमेते मम पुत्रा गुणवन्तः क्रियन्ताम् ।

आहार-निद्रा-भय-मैथुनं च
सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् ।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥ २५ ॥

इसलिये अब किसी प्रकारसे, इन मेरे पुत्रोंको गुणवान् कीजिये. आहार, निद्रा, भय और मैथुन, ये पशुओं और मनुष्योंमें समान हैं, केवल मनुष्यों धर्मही अधिक है और धर्महीन मनुष्य पशुके समान है ॥ २५ ॥

यतः,-

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते ।
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम् ॥ २६ ॥

क्योंकि जिस मनुष्यमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इनमेंसे एक भी न हो, उसका जन्म बकरीके गलेके थनके समान वृथा (निकम्मा) है ॥ २६ ॥

यच्चोच्यते, -

आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च ।

पञ्चैतान्यपि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः ॥ २७ ॥

जैसा कहा जाता है कि-आयु, कर्म, धन, विद्या और मृत्यु, ये पांच बातें मनुष्यकी गर्भहीमें लागू होती हैं ॥ २७ ॥

7.3 प्रतिमानाटकम् नाटक का परिचय

भास विरचित प्रतिमानाटक में कुल सात अंक हैं। इस नाटक को रामकथा के आधार पर लिखा गया है। इसका उपजीव्यत्व तो रामायण से ही लिया गया है तथापि कवि ने अपनी कल्पना एवं मेधाशक्ति से इसमें अपनी मौलिकताएं भी जोड़ दी हैं।

प्रतिमानाटक में भास ने राम वनगमन से लेकर रावणवध तथा राम के अयोध्या आगमनोपरान्त उनके राज्याभिषेक तक की घटनाओं का सविस्तार विवेचन किया है।

7.3.1 नामकरण की सार्थकता

प्रतिमानाटक का नामकरण इसके तृतीय अंक के कथानक के आधार पर किया गया है जिसमें प्रतिमागृह की घटना वर्णित है। रामवनगमनोपरान्त बुलावा आने पर ननिहाल से लौटते समय मार्ग में सुस्थापित देवकुल में इक्ष्वाकुवंशीय पूर्वराजाओं के साथ सद्यः स्थापित महाराज दशरथ की प्रतिमा को देखकर सशंकित एवं खिन्नमना भरत को अपने पिता की मृत्यु का आभास भास ने स्वतः करा दिया है।

राजाओं की प्रतिमा-निर्माण एवं इसकी स्थापना का कोई भी उल्लेख प्रतिमानाटक के आधार ग्रन्थ रामायण में उल्लिखित नहीं है। यह सर्वथा महाकवि भास की अपनी मौलिकता एवं बुद्धिमत्ता है, जिसके माध्यम से किसी व्यक्ति के सूचना दिए बिना भी वे इस दारुण-दुःख का भान भरत को करा देते हैं।

इस प्रकार प्रतिमा की घटना का सम्पूर्ण प्रकरण कविकल्पना प्रसूत है, और यही इस नाटक की आधारभूमि तथा इसके नामकरण का आधार है।

वस्तुतः प्रतिमा दर्शन की घटना का प्राधान्य होने से ही इस नाटक का नाम प्रतिमानाटक पड़ा।

7.3.2 नाटक की कथावस्तु

प्रथम अंक- प्रथम अंक में राम के राज्याभिषेक की तैयारियों के बीच अकस्मात् इन तैयारियों को रोक दिया जाता है। महारानी कैकेयी ने राजा दशरथ से राम को चौदह वर्ष तक वनवास एवं भरत का राज्याभिषेक वरदानस्वरूप मांग लिया। तत्पश्चात् वनगमन को उद्यत राम एवं उनके लिए प्राण निछावर करने वाले लक्ष्मण के बीच संवाद और अन्ततः राम,

सीता एवं लक्ष्मण का वनगमन की घटना प्रथम अंक का प्रमुख कथानक है। प्रथम अंक का प्रारम्भ महाराज दशरथ की आज्ञा से राम के अभिषेक की तैयारियों से होता है, हर तरफ गाजे-बाजे और नगाड़ों के साथ मांगलिक कृत्य हो रहे हैं। प्रजा अत्यन्त प्रसन्न है, तभी अकस्मात् मांगलिक कृत्य रुक जाता है। सखियों संग हास-परिहास में एक वल्कल वस्त्र धारण की हुई है सीता को चेटी से सूचना मिलती है कि राम का अभिषेक रुक गया है,

क्योंकि महारानी कैकेयी ने अपने पुत्र भरत के लिये राज्य पद एवं राम के लिये चौदह वर्ष का वन वरदान स्वरुप मांग लिया है। जिसे सुनकर महाराज दशरथ मूर्च्छित होकर गिर पड़े। तदनन्तर राम सीता के पास पहुंचते हैं और इस समाचार की पुष्टि करते हैं, तभी अत्यन्त क्रोधित अवस्था में लक्ष्मण भी वहाँ पहुंचते हैं और कहते हैं कि मैं इस संसार को स्त्री-विहीन कर दूंगा क्योंकि इस सम्पूर्ण घटना के पीछे एक स्त्री कैकेयी का हाथ है।

लक्ष्मण की बात सुनकर राम अत्यन्त उदारता के साथ उन्हें समझाते हैं और उनके क्रोध को शान्त करते हैं। राम सीता और लक्ष्मण को अपने अकेले वनगमन के निर्णय से अवगत कराते हैं। तत्पश्चात् सीता और लक्ष्मण भी राम के साथ वन जाने का निवेदन करते हैं। पहले राम उन्हें अनुमति नहीं देते हैं किन्तु राम को उन दोनों की याचना को अन्ततः स्वीकार करना पड़ता है। प्रथम अंक का समापन राम, सीता और लक्ष्मण के वन की ओर प्रस्थान करने से होता है।

द्वितीय अंक- द्वितीय अंक में महामन्त्री सुमन्त्र का राम, सीता और लक्ष्मण के बिना ही अयोध्या लौटना तत्पश्चात् महाराज दशरथ का मूर्च्छित होना और अन्ततः पुत्रवियोग में उनका प्राणत्याग देना इत्यादि कथा का अतीव मार्मिक निरूपण किया गया है। राम सीता और लक्ष्मण के वन चले जाने के कारण सम्पूर्ण प्रजा दुःखी है। उन्हें ऐसा भान होता है कि राम के बिना अयोध्या जनविहीन हो गयी है। राम के वनगमन से सर्वाधिक दुःखी एवं विकल राजा दशरथ हैं।

राम के वन जाते ही इसका निमित्त स्वत: को मानकर अयोध्या नरेश दशरथ समुद्रगृह में जाकर अधीर अवस्था में पड़े हैं। कौशल्या और सुमित्रा महाराज दशरथ को अनेक प्रकार से धैर्य धारण कराते हुए सान्त्वना दे रही हैं। राम, सीता और लक्ष्मण को वन छोड़ने महामन्त्री सुमन्त्र गए हुए हैं। महाराज दशरथ को अब भी यह विश्वास है कि सुमन्त्र उन्हें समझा-बुझाकर वापस ले आएंगे। किन्तु वस्तुस्थिति ठीक इसके विपरीत है। सुमन्त्र वन से खाली हाथ लौट आते हैं।

उन्हें देखकर महाराज दशरथ घोर निराशा में डूब जाते हैं और उनकी रही सही उम्मीद भी खत्म हो जाती है। वह चेतनाशून्य हो जाते हैं और होश में आने पर बारंबार राम, सीता और लक्ष्मण का कुशलक्षेम पूछते हैं। महामंत्री सुमन्त्र और महाराज दशरथ के बीच होने वाला यह वार्तालाप करुण रस का अति उन्नत निदर्शन है, जिसमें पुत्र-वियोग से शोकसन्तप्त एक पिता के विदीर्ण हृदय का अतिमार्मिक चित्रण किया गया है।

दशरथ को अपनी मृत्यु का आभास होने लगता है और ऐसा भान होता है कि उन्हें अपने साथ ले जाने के लिये उनके पितर आ गये हैं। अन्ततः पुत्र वियोग के दारुण दुःख को सहने में असमर्थ अयोध्या नरेश दशरथ अपने प्राण त्याग देते हैं। दशरथ के प्राण-परित्याग के साथ ही द्वितीय अंक का समापन हो जाता है।

तृतीय अंक- तृतीय अंक में भरत का ननिहाल से लौटते समय मार्ग में अवस्थित देवकुल में स्थापित पिता दशरथ की प्रतिमा को देखकर सशंकित होना और पिता की मृत्यु का अनुमान लगाकर मूर्च्छित होना तथा राम को अयोध्या वापस लाने के लिए उनके पास मन्त्रियों सहित जाने की कथा वर्णित है। पिता की मृत्यु और राम के वनगमन के समय भरत अपने ननिहाल में थे। अयोध्या से बुलावा आने पर वह ननिहाल से अयोध्या वापस लौट रहे हैं।

भरत अयोध्या के बाह्यक्षेत्र में अवस्थित प्रतिमागृह के पास विश्रामार्थ रुकते हैं। वहाँ का पुरोहित उन्हें इस प्रतिमागृह से परिचित कराते हुए यह बताता है कि यह इक्ष्वाकुवंशीय पूर्ववर्ती राजाओं का प्रतिमागृह है। तदनन्तर वह महाराज दिलीप, रघु एवं अज की यशोगाथा का वर्णन उनके सम्मुख करता है। इसके बाद भरत की दृष्टि सद्यः स्थापित महाराज दशरथ कि प्रतिमा पर पड़ती है,

जिसे देखकर संशकित एवं आतंकित मन भरत अपने पिता दशरथ कि मृत्यु का अनुमान लगाकर मूच्छिंत हो जाते हैं। तभी उनकी माताओं का भी वहाँ प्रवेश होता है। जिनके स्नेह एवं ममतामयी स्पर्शमात्र से भरत की मूर्च्छा टूट जाती है। होश में आने पर भरत देवकुलिक से सम्पूर्ण वृत्तान्त से परिचित होते हैं। उन्हें यह भी पता चलता है कि सारे अनिष्ट एवं अनर्थ की जड़ उनकी माता कैकेयी ही हैं। वे अपनी माता की कठोर शब्दों में निन्दा करते हैं।

पश्चात् अयोध्या पहुँचने पर वशिष्ठादि पुरोहित भरत के सम्मुख उनके अभिषेक का प्रस्ताव रखते हैं, जिन्हें सादर अस्वीकार कर भरत मन्त्री सुमन्त्र एवं अन्य विश्वस्त सहयोगियों के साथ राम को अयोध्या वापस लाने के लिए वन की ओर प्रस्थान कर जाते हैं। तृतीय अंक भरत के भ्रातृवात्सल्य, त्याग एवं समर्पण का अति उत्कृष्ट उदाहारण है।

चतुर्थ अंक- चतुर्थ अंक में भरत मन्त्री सुमन्त्र इत्यादि के साथ वन में राम से भेंट करते हैं और उनसे अयोध्या वापस लौटने की याचना करते हैं। किन्तु राम उन्हें समझा-बुझाकर वापस भेजना चाहते हैं। अन्ततः बड़े भाई की बातों का मान रखने के लिए भरत इस शर्त पर वापस लौटने को तैयार हो जाते हैं कि वन से वापस अयोध्या आने पर राम अपना राजसिंहासन स्वीकार कर लेंगे।

चतुर्थ अंक के प्राम्रभ में भरत महामन्त्री सुमन्त्र के रथ पर आरूढ़ होकर अन्य विश्वस्त अनुचरों के साथ दण्डक वन में विराजमान राम के पास पहुँचते हैं। अश्रुपूरित नेत्रों वाले भरत को देखकर राम भी भावविह्वल हो उठते हैं। राम, लक्ष्मण और सीता के सम्मुख भरत अपनी माता कैकेयी के कृत्य की भर्त्सना करते हैं और उनसे अयोध्या वापस लौटने का आग्रह करते हैं।

राम भरत को समझाते हुए कहते हैं कि उन्होंने पिता के प्रण को पूर्ण करने का निश्चय किया है। तब भरत बड़े भाई राम से उन्हें भी सीता और लक्ष्मण के साथ वन में रहने की अनुमति प्रदान करने की याचना करते हैं। राम भरत की मनोदशा को भली-भाँति समझकर उन्हें उनके प्रजा एवं अन्यजनों के प्रति कर्तव्यबोध से अवगत कराते हैं।

अन्ततः राम के समझाने पर भरत इस शर्त के साथ अयोध्या वापस लौटने पर सहमत होते हैं कि चौदह वर्ष पश्चात् वन से अयोध्या लौटते ही राम अपना राज्य स्वीकार कर लेंगे और इन चौदह वर्षों में शासन-संचालन हेतु उन्हें अपनी चरणपादुका प्रदान करेंगे। राम की स्वीकारोक्ति के पश्चात् भरत सुमन्त्र तथा अन्य प्रियजनों के साथ अयोध्या की ओर प्रस्थान करते हैं। इसी के साथ चतुर्थ अंक का समापन हो जाता है।

पंचम अंक- पंचम अंक में कपटी रावण अपनी बहन शूर्पणखा के नाक काटने एवं अपने भाईयों खर-दूषण के वध का प्रतिशोध लेने के लिए छल से सीता का हरण कर लेता है। पंचम अंक के प्रारम्भ में राम पिता दशरथ का वार्षिक श्राद्ध करने के लिये विचार निमग्न हैं। सीता उन्हें धैर्य धारण कराते हुए कहती हैं कि उनके पिता का श्राद्ध कर्म अयोध्याधिपति भरत पूरे विधि-विधान के साथ करेंगे। तभी अतिथि रूप में कपट वेशधारी रावण का आगमन होता है।

संन्यासी-वेश में रावण को देखकर राम उसका सम्मान करते हैं। परिव्राजक वेशधारी रावण राम से स्वर्ण मृग के पिण्डदान से पितृश्राद्ध कराने की इच्छा अभिव्यक्त करता है। तभी स्वर्णमृग के वेश में मारीच वहाँ प्रकट होता है। लक्ष्मण किसी कार्यवशात् वहाँ उपस्थित नहीं हैं। अतः राम स्वतः इस मृग को पकड़ने चले जाते हैं। सीता को अकेली पाकर रावण अपने वास्तविक स्वरूप में आकर उनका अपहरण कर लेता है।

सीता करुण-क्रन्दन करती है, जिसे सुनकर गृद्धराज जटायु उन्हें बचाने आते हैं। महाकवि भास ने पांचवें अंक में रामकथा से अपने नाटक में परिवर्तन लाकर सीता के ऊपर लगने वाले मृगलोभ के आक्षेप का पूर्णतः निराकरण कर दिया है।

षष्ठ अंक - षष्ठ अंक के प्रारम्भ में सीता को रावण के चंगुल से बचाने आए जटायु रावण से भयंकर युद्ध करते हैं और अन्ततः रावण के हाथों घायल होकर वीरगति को प्राप्त हो जाते हैं। रावण की मनसा पूर्ण होती है और वह सीता को लंका ले जाने में सफल हो जाता है। इसके बाद सीता की खोज करते हुए राम और लक्ष्मण को यह समग्र वृत्तान्त दो तपस्वी कुमार बताते हैं।

तत्पश्चात् राम और सुग्रीव की मैत्री होती है और राम किष्किंधा में किंचित् कालावधि हेतु ठहरे हुए हैं। पुनश्च भरत राम की खोज-खबर लेने के लिए मन्त्रिवर सुमन्त्र को वन में भेजते हैं। वहाँ पहुँचकर सुमन्त्र सीताहरण के दुःखद समाचार से अवगत होते हैं। पश्चात् अयोध्या वापस लौटकर भरत से यथातथ्य निवेदन करते हैं। इसी समय कैकेयी महाराज दशरथ को मुनि से मिले शाप से भरत को अवगत कराते हुए अपने ऊपर लगे दोषारोपण का निराकरण करती है।

कैकेयी भरत को राम की मदद करने का आह्वान भी करती है। भरत अपने बड़े भाई राम की सहायता एवं रावण के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर राम के पास ससैन्य पहुंचने हेतु प्रस्थान करते हैं। इस अंक की कथा में कवि भास ने अपनी कल्पना से अनेक परिवर्तन कर दिये हैं, जिससे कैकेयी के ऊपर लगने वाला दोष निराकृत हो सके।

सप्तम अंक- सप्तम अंक में भरत के ससैन्य राम के सहयोगार्थ पहुंचने से पहले ही भरत को तपस्वी द्वारा रावण पर राम के विजय की सूचना मिलती है। साथ ही तपस्वी उन्हें यह भी सूचित करते हैं कि विभीषण का लंकाधिपति के रूप में अभिषेक करके राम तपोवन में पहुँच चुके हैं। दुष्ट दानव एवं क्रूर आततताई रावण के वध से जनमानस अत्यन्त प्रसन्न है।

ऐसा शुभ-समाचार सुनकर प्रसन्न मन भरतादि वहाँ पहुँचकर राम से मिलते हैं और वहीं पर उनका अयोध्याधिपति के रूप में राज्याभिषेक करते हैं। माता कैकेयी भी अत्यन्त हर्षित हैं और अयोध्या पहुँचने पर राम के विधिवत् राज्याभिषेक की कामना करती हैं, जिसे राम सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। तदनन्तर सभी पुष्पक विमान पर आरूढ़ होकर अयोध्या की ओर प्रस्थान करते हैं। यहीं पर यह नाटक भरतवाक्य के साथ समाप्त हो जाता है, जिसमें भास ने सभी के मङ्गल की कामना की है।

7.3.5 प्रतिमानाटकम् की प्रमुख सूक्तियाँ

प्रतिमानाटक के प्रथम एवं तृतीय अंक की प्रमुख सूक्तियों इस प्रकार हैं

i) अनुचरति शशाङ्क राहुदोषेऽपि तारा। (1/25)

ii) अल्पं तुल्यशीलानि द्वन्द्वानि सृज्यन्ते।

iii) गङ्गायमुनयोर्मध्ये कुनदीव प्रवेशिता। (3/16)

iv) गोपहीना यथा गावो विलयं यान्ति। (3/23)

v) निर्दोषदृश्या हि भवन्ति नार्यो यज्ञे विवाहे व्यसने वने च। (1/29)

vi) पतति च वनवृक्षे याति भूमिं लता च। (1/25)

vii) पिपासार्तोऽनुधावामि क्षीणतोयां नदीमिव। (3/10)

viii) बहुवृत्तान्तानि राजकुलानि नाम। (बहुवुत्तन्ताणि राअउलाणि णाम) (1/5)

ix) भर्तृनाथा हि नार्यः। (1/25)

x) शरीरेऽरिः प्रहरति हृदये स्वजनः । (1/12)

xi) सर्वशोभनीयं सुरूपं नाम। (सव्वसोहणीअं सुरूवं णाम) (1/4)

xii) सर्वोऽप्येवं मृदुः परिभूयते। (1/18)

xiii) सुलभापराधः परिजनो नाम। (सुलहावराहो तो परिअणो णाम) (1/4)

xiv) स्वः पुत्रः कुरुते पितुर्यदि वचः कस्तत्र भो ! विस्मयः। (1/5)

xv) हस्तस्पर्शो हि मातृणामजलस्य जलाञ्जलिः। (3/12)

तृतीय अङ्क के पात्र

(सुधाकार- प्रतिमा गृह में सुधा का लेप करने वाला।

भट-राजपुरुष ।

सूत-भरत का सारथि।

भरत-महाराजदशरथ का पुत्र, कैकेयीतनय।

देवकुलिक-प्रतिमा गृह का पुजारी।

सुमन्त्र- महाराज दशरथ का मन्त्री।

सुमित्रा-महाराज दशरथ की तृतीय पत्नी, लक्ष्मण और शत्रुघ्न की माता।

(सुधाकार का प्रवेश)

सुधाकारः- (सम्मार्जनादीनि कृत्वा) भोदु, दाणिं किदं एत्थ कय्यं अय्यसम्भवअस्स आणत्तं। जाव मुहुत्तं सुविस्सं। (भवतु, इदानीं कृतमत्र कार्यमार्यसम्भवकस्याज्ञाप्तम् । यावन्मुहूर्तं स्वप्स्यामि। (स्वपिति)

सुधाकार- (झाड़ू आदि लगाकर) अच्छा, अब आर्य सम्भवक द्वारा बताए गए सव कार्य तो कर लिए, अब थोड़ी देर सो लूँ। (सो जाता है)

(प्रविश्य)

(सिपाही का प्रवेश)

भटः (चेटमुपगम्य ताडयित्वा) अड्डो दासीए पुत्त ! किं दाणि कम्मं ण करेसि? (ताडयति) (अङ्घो दास्याः पुत्र ! किमिदानीं कर्म न करोषि ?)

भट- (चेट के पास जाकर तथा उसे पीट कर) अरे दासीपुत्र! अब काम क्यों नहीं करता? (पीटता है।)

सुधाकारः- (बुद्ध्वा) तालेहि मं तालेहि मं। (ताडय मां ताडय माम् !)।

सुधाकार- (जागकर) मारो, मुझे मारो।

भटः-ताडिदे तुवं किं करिस्ससि। (ताडिते त्वं किं करिष्यसि ?)

भट-मारने पर तुम क्या करोगे?

सुधाकारः- अहण्णस्स मम कत्तवीअस्स विअ बाहुसहस्सं णत्थि ।
(अधन्यस्य मम कार्तवीर्यस्येव बाहुसहस्त्रं नास्ति ।)

सुधाकार-मुझ अभागे की कार्तवीर्य की तरह हजार भुजाएँ नहीं हैं।

भटः- बाहुसहस्सेण किं कय्यं? (बाहुसहस्रेण किं कार्यम्?)

भट - हजार भुजाओं से क्या करेगा?

सुधाकारः- तुवं हणिस्सं। (त्वां हनिष्यामि।)